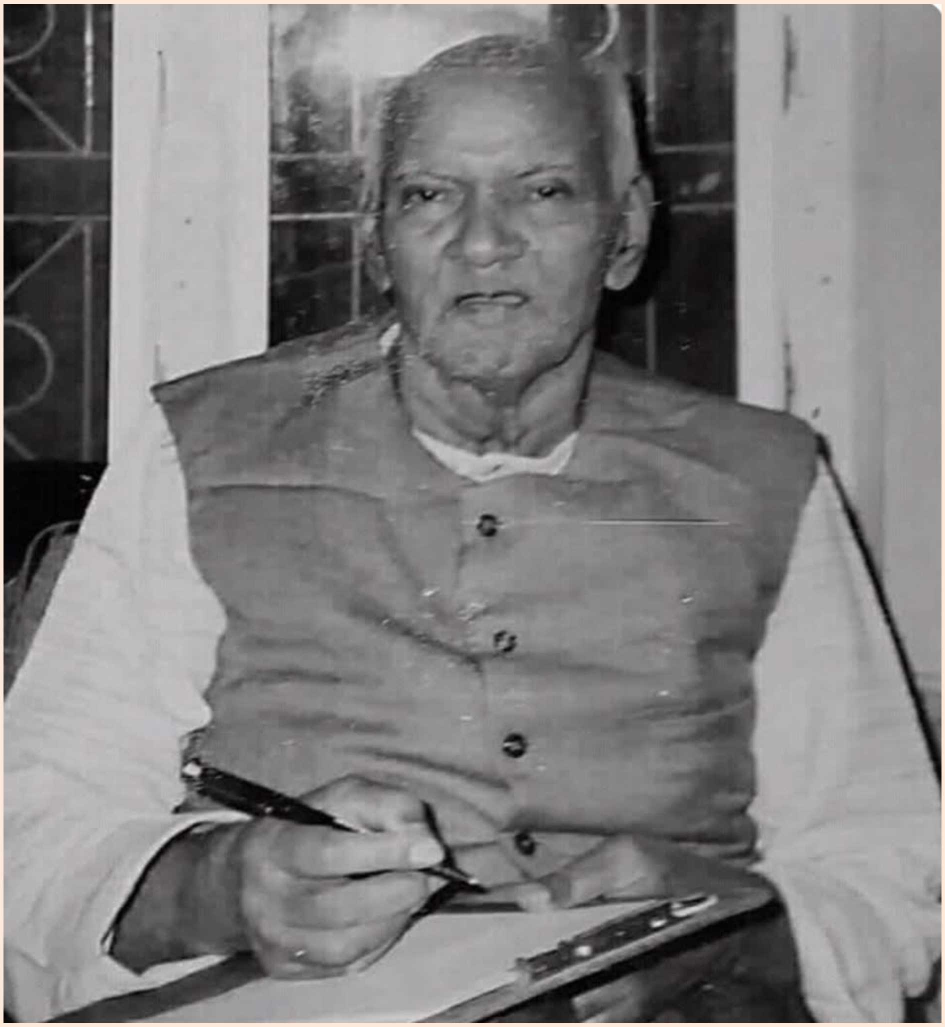
तू पहले दस कदम तो चल



आज के दिव्य ज्ञानप्रसाद का सारांश

ऑनलाइन ज्ञानरथ गायत्री परिवार के मंच से आज प्रकाशित हो रहे दैनिक ज्ञानप्रसाद लेख में तीन लोगों की वार्ता का वर्णन है। साधु, किसान और वृद्ध व्यक्ति। तीनों की वार्ता में मात्र चौबीस अक्षरों वाले छोटे से गायत्री मंत्र के सहारे आध्यात्मिक शिखरों की यात्रा किस प्रकार संभव हो पाती है, बड़े ही सरल शब्दों में बताई गयी है । देखने में तो आध्यात्मिक जीवन की "अनन्त यात्रा और छोटे से गायत्री मंत्र"   में तालमेल कुछ अटपटा सा ही दिखाई देता है लेकिन वृद्ध व्यक्ति के निम्नलिखित शब्द पूर्णतया सार्थक होते दिखते हैं :

"आध्यात्मिक जीवन सोच-विचार से नहीं, बल्कि उसकी सम्पूर्णता में उसकी साधना से ही जाना जाता है। सत्य से साक्षात्कार करने का, "जागो और जियो! जागो और चलो"   के सिवाय और कोई मार्ग नहीं है। आध्यात्मिक सत्य कोई मृत वस्तु नहीं है कि उसे बैठे-बिठाए ही पाया जा सके। वह तो अत्यन्त जीवन्त प्रवाह है। अपनी जीवन साधना की नियमितता में जो व्यक्ति सब प्रकार से मुक्त और निर्बन्ध हो बहता है, वही उसे पाता है। "

इतना प्रकाश प्रत्येक मनुष्य के पास है कि उसे कम से कम "दस कदम का फासला"   दिखाई पड़ सके और उतना ही पर्याप्त भी है। गायत्री मंत्र की नियमित साधना का प्रकाश परमात्मा तक पहुँचने के लिए पर्याप्त है।

Ph.D का शुभारम्भ नर्सरी से ही तो होता है जहाँ अबोध शिशु को मात्र नियमितता से, स्थिर होकर बैठने का ही अभ्यास कराया जाता है। आरंभिक साधना का यही एकमात्र गुरुमंत्र है।

अखंड ज्योति अक्टूबर 2002

गाँव के लोग उसे **“हरिया** कहकर बुलाते थे। वह एकदम सीधा-सादा, भोला-भाला, सहज, सरल किसान था। गाँव में उसके थोड़े से खेत थे। इन खेतों से ही उसकी गुजर-बसर चलती थी। अपने खेतों में काम करते हुए वह गाँव के पास वाली पहाड़ियों की ओर बड़ी हसरत भरी निगाहों से देखा करता था। उनकी हरियाली से ढंकी चोटियाँ उसे अपने खेतों से ही दिखाई पड़ती थी। बहुत बार उसके मन में उन्हें निकट से जाकर देखने की चाहत अत्यन्त बलवती हो जाती थी लेकिन कभी एक तो कभी दूसरे कारण से बात टलती चली गयी। वह वहाँ जा ही नहीं पाया।

पिछली बार तो उसे केवल इसलिए रुकना पड़ा, क्योंकि उसके पास लालटेन नहीं थी। लालटेन के बिना वह जाता भी तो कैसे? उन पहाड़ियों पर जाने के लिए रात के अंधेरे में ही निकलता पड़ता था। सूर्य के निकल आने पर पहाड़ की चढ़ाई और भी कठिन हो जाती थी। सूर्य की गर्मी के कारण पगडण्डियाँ तप जाती थीं। उन पर पाँव धरे नहीं जाते थे। उसके पास तो जूते भी नहीं थे। ऐसे में उसका दिन में जलती हुई पहाड़ी पगडंडियों पर नंगे पाँव चलना और भी मुश्किल था। गाँव के बुजुर्गों से उसने यह भी सुन रखा था कि पहाड़ियों के रास्ते पर प्यास बुझाने के लिए पानी का कोई स्रोत नहीं है। इस रास्ते पर कोई झरना या चश्मा नहीं है, जिससे प्यासे मुसाफिर अपनी प्यास बुझा सकें।

कुल-मिलाकर उस तरफ दिन का सफर मुश्किल था। दिन में उधर जाने पर अनेकों विघ्न-बाधाएँ थी। रात का सफर ही एकमात्र आसान तरीका था लेकिन रात में रास्ता तय करने के लिए रोशनी का कोई बन्दोबस्त तो चाहिए ही। बस यही उसकी परेशानी थी। पिछले कई सालों से वह यह

बन्दोबस्त नहीं जुटा पाया था। इसमें मुख्य अड़चन उसकी गरीबी थी। उसके पास खेत भी कोई ज्यादा नहीं थे। बस जैसे-तैसे किसी तरह गुजर-बसर चल जाती थी। कभी-कभी तो गाँव के मुखिया का थोड़ा-बहुत कर्ज भी लद जाता। ऐसे में रोशनी के लिए लालटेन जुटाना उसके लिए भारी फिजूलखर्ची थी लेकिन पहाड़ियों की हरी-भरी चोटियाँ उसे जब-तब मौन निमंत्रण भेजती रहती थीं। इन्हें देखकर मन में अनचाहे ही हूक और हुलस उफन पड़ती थी।

अभी इस बार कुछ दिनों पहले जब वह खेतों में काम कर रहा था। उसकी सतृष्ण निगाहें पहाड़ों की चोटियों पर जमी थी। उसे इस तरह पहाड़ों की ओर ललचायी नजरों से निहारते हुए देखकर पास खड़े मुखिया ने पूछ लिया। मुखिया के बहुत पूछने पर उसने थोड़ा रुकते-झिझकते अपने मन की बात कह दी। दयावश गाँव के मुखिया ने उसकी बातें सुनकर उसके लिए एक लालटेन की व्यवस्था जुटा दी। लालटेन मिल जाने पर पहाड़ों पर जाने की खुशी में वह रात भर सो नहीं सका। रात्रि दो बजे ही वह उठ गया और पहाड़ों के लिए निकल पड़ा।

गाँव के बाहर बने मन्दिर के पास आकर वह ठिठक कर रुक गया। इस मन्दिर में एक युवा साधु रहा करता था। वह भी इस समय अपने सोच-विचार में जग रहा था। हरिया ने उसे अपने मन की चिन्ता और दुविधा बतायी और कहा कि अमावस की रात का घना-घुप अन्धकार है, उसके पास जो लालटेन है, उसका उजाला तो दस कदमों से ज्यादा नहीं हो सकता जबकि पहाड़ की दस मील चढ़ाई चढ़नी है। दस मील दूर मंजिल और दस कदम उजाला करने वाली लालटेन, भला कैसे बात

बनेगी? ऐसे घुप-घने अंधेरे में इतनी सी लालटेन के प्रकाश को लेकर यात्रा करना कहाँ तक उचित है? यह तो महासागर में ज़रा सी डोंगी लेकर उतरने जैसा काम है?

मंदिर के युवा साधु को उसकी ये बातें ठीक लगी। उसने भी हरिया की बातों में हाँ में हाँ मिलायी। उसकी अपनी भी समस्या कुछ ऐसी ही थी। वह स्वयं भी सोच रहा था **गुरु द्वारा दिए गए छोटे चौबीस अक्षरों वाले गायत्री मंत्र के सहारे आध्यात्मिक शिखरों की यात्रा किस तरह हो पाएगी। आध्यात्मिक जीवन की अनन्त यात्रा और छोटा सा गायत्री मंत्र, बात कुछ बनती नजर नहीं आती।** युवा साधु भी हरिया किसान के साथ चिन्ता में डूब गया। जब दोनों चिन्ता में डूबे थे, तभी उन्होंने देखा कि कोई वृद्ध व्यक्ति पहाड़ियों की तरफ से उनकी ओर आ रहा है। उस वृद्ध के हाथ में तो और भी छोटी लालटेन है।

हरिया लपक कर वृद्ध की ओर गया और उसे रोककर अपनी दुविधा बतायी। हरिया की सभी बातें सुनकर वृद्ध व्यक्ति खूब जोर से हंसा। उसकी उजली हंसी से उसकी दूधिया घनी दाढ़ी और भी प्रकाशित हो गयी। हंसते हुए वृद्ध बोला, “पागल? तू पहले दस कदम तो चल। जितना दिखता है, उतना तो आगे बढ़। फिर इतना ही और आगे दिखने लगेगा। दस कदम तो बहुत होते हैं। एक कदम भी दिखता हो, तो उसके सहारे सारी भूमि की परिक्रमा की जा सकती है।” वृद्ध की बातों में उसके अनुभव की झलक थी।

वृद्ध व्यक्ति हरिया किसान के साथ चलते हुए मन्दिर वाले युवा साधु तक पहुँचा। और बिना किसी लाग-लपेट के उससे कहने लगा, **“आध्यात्मिक**

जीवन के सम्बन्ध में तुम्हें इस तरह सोच-विचार में पड़े देखकर मैं बहुत हैरान होता हूँ। आध्यात्मिक जीवन सोच-विचार से नहीं, बल्कि उसकी सम्पूर्णता में, उसकी साधना से ही जाना जाता है। सत्य से साक्षात्कार करने का और कोई मार्ग है ही नहीं । जागो और जियो! जागो और चलो। आध्यात्मिक सत्य कोई मृत वस्तु नहीं है कि उसे बैठे-बिठाए ही पाया जा सके। वह तो अत्यन्त जीवन्त प्रवाह है। अपनी जीवन साधना की नियमितता में जो मुक्त और निर्बन्ध हो बहता है, वही उसे पाता है।"

युवा साधु उसकी बातों को बड़े ध्यान से सुन रहा था। उसके निराश मन के अंधेरों में आशा की उजली किरणें बरस रही थीं। वह वृद्ध कह रहे थे, **"बहुत दूर की सोच-विचार में अक्सर ही निकट को खो दिया जाता है। जबकि निकट ही सत्य है। और निकट में ही वह भी छिपा है, जो दूर है। क्या दूर को पाने के लिए सर्वप्रथम निकट को ही पाना अनिवार्य नहीं है? क्या समस्त भविष्य वर्तमान के क्षण में ही उपस्थित नहीं है? क्या एक छोटे से कदम में ही बड़ी से बड़ी मंजिल का आवास नहीं होता है?'**

निकटता के कारण ही युवा साधु ने वृद्ध व्यक्ति को अब तक पहचान लिया था। वही उसके दीक्षा गुरु थे। उन्हीं ने उसे गायत्री मंत्र की दीक्षा दी थी। युवा साधु के प्रणाम करते ही वृद्ध व्यक्ति उसे आशीष देते हुए बोले, **"गुरु जानते हैं कि शिष्य को कब क्या चाहिए? तुम्हें जो दिया गया है, वही तुम्हारे लिए सर्वश्रेष्ठ है। धैर्यपूर्वक नियमित रूप से गायत्री साधना करो। इसी से तुम अध्यात्म के सभी शिखरों पर भ्रमण कर**

सकोगे। सोच-विचार नहीं, साधना करो। दुविधा में मत पड़ो, यात्रा करो।”

हरिया ने अपनी यात्रा शुरू की। उस युवा साधु ने अपनी गायत्री साधना की नियमितता में ध्यान लगाया। कुछ समय के बाद दोनों ही अपने-अपने ढंग से अपने अनुभव के बल पर सबको समझाने लगे,कहने लगे, **“मित्रों! बैठे क्यों हो? उठो और चलो। जो केवल सोचता रहता है, वह नहीं बल्कि जो चलता है, केवल वही अपनी मंज़िल तक पहुँचता है।”**

स्मरण रहे कि इतना विवेक, इतना प्रकाश प्रत्येक मनुष्य के पास है कि उसे कम से कम **“दस कदम का फासला”** दिखाई पड़ सके और उतना ही पर्याप्त भी है। गायत्री मंत्र की नियमित साधना का प्रकाश परमात्मा तक पहुँचने के लिए पर्याप्त है।

Ph.D का शुभारम्भ नर्सरी से ही तो होता है जहाँ अबोध शिशु को मात्र नियमितता से, स्थिर होकर बैठने का ही अभ्यास कराया जाता है। आरंभिक साधना का यही एकमात्र गुरुमंत्र है।

समापन, जय गुरुदेव